V
ISSN (Online) :2583-8334
(International Peer-Reviewed Refereed Journal)
Volume 4, Issue-1, January to March : 2026
Published by Rangmati Publication http://www.rangmatipublication.com/

वेदो में कृषिविज्ञान

डॉ.सुनिल एच. प्रजापति
मददनीश प्राध्यापक (संस्कृत)
सरकारी विनयन एवं वाणिज्य कॉलेज,गांभोई

प्रस्तावना :- *मनुष्य का जीवन अन्न पर निर्भर है, और अन्न की प्राप्ति कृषि से होती है, इसलिए कृषि मानवमात्र के जीवन का आधार है। सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ही अन्न की समस्या उत्पन्न हुई और उसके निवारण के लिए कृषि का आविष्कार हुआ। अथर्ववेद के अनुसार कृषि-कार्य गौरव का कार्य माना जाता था।[i] इंद्र हल द्वाराखेत में बनाई गई रेखा अर्थात् कूंड को ग्रहण करें तथा पूषा देव उस की रक्षा करें. हल से जुडी हुई भूमि हमें अभिमत फल देने वाली बन कर सभी वर्षों में जौ, गेहूं आदि अन्न दे। अथर्ववेद के अनुसार विद्वान और कवि भी कृषि-कार्य करते थे।[ii]*

कूटशब्दः *- कृषि कार्य का प्रारम्भ, उत्तम कृषि के लिए आवश्यक तत्त्व, कृषि सबंधी तथ्य, भूमि के प्रकार, कृषि के लिए आवश्यक पदार्थ*

बुध्धिमान लोग बैलों को हल में जोतते हैं, देवों को सुखकर अन्न प्राप्ति की इच्छा से वे बैलों के कंधों पर जुआ रखते हैं। अथर्ववेद में वर्णन है, कि विराट् ब्रह्म जब मनुष्यों के पास पहुँचा तो उन्होने उसे इरावती (अन्नसमृध्धि) कहा। इस इरावती को दुहकर उन्होंने कृषि और अन्न प्राप्त किया, और वह कृषि और अन्न से मनुष्य का जीवन चलता है। और जो लोग कृषिविद्या में निपुण होते थे, उन्हे सफल आजीविका वाला कहा जाता था।[iii] अथर्ववेद में कृषि के विशेषज्ञो को ‘अन्नविद’ नाम देते हुए कहा गया है, कि सर्वप्रथम उन्होने कृषि के नियम बनाये थे।[iv] अथर्ववेद में कहा गया है कि अन्न मनुष्य के के जीवन का आधार है। इसके बिना मनुष्य जीवित नही रह सकता है। ‘भूम्यांमनुष्याजीवन्तिस्वधयान्नेनमर्त्याः।’[v]

यजुर्वेद में कृषि को मानवीय कल्याण का साधन माना गया है। उसमे राजा का प्रमुख कर्तव्य बताते हुए कहा गया है कि ‘वह कृषि की उन्नति करे, जन-कल्याण करे और धन-धान्य की वृध्धि करे।[vi] शतपथ ब्राह्मण में कृषिकार्य को चार शब्दो में वर्णित किया गया है।

१. **कर्षण** - खेत की जुताइ करना
२. **वपन**- बीज बोना
३. **लवन** - पके खेत की कटाई करना
४. **मर्दन** - मडाई (घास-फूस) करके स्वच्छ अन्न को प्राप्त करना।[vii]

इसलिएअथर्ववेद में अन्न को विश्व की प्रमुख समस्या बताते हुए ‘**भृत्याअन्नेसमस्ययदसन्मनीषाः**।’कहा गया है।[viii]

- **कृषि कार्य का प्रारम्भ** :- पृथ्वी पर कृषिविद्या की उत्पत्तिऔरविकास किस प्रकार हुआ, इस विषय में कुछ रोचक प्रसंग वेदों में प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद अनुसार ‘सर्वप्रथम देवगण (पुरुषार्थी विद्वान्) आगे आए, उनके पास

अपनी-अपनी कुल्हाड़ियों (परशु) थीं, उन्होंने जंगलों को काटकर साफ किया। उनके साथ उनके कुछ सहयोगी परिजन या प्रजाजन भी थे। उन्होंने उपयोगी लकड़ियों को नदियों के किनारे रख दिया और जहाँ कहीं घास-फूस थी, उसे जला दिया। इससे ज्ञात होता है कि प्रारम्भिक अवस्था में जंगलों की अधिकता थी। जंगलों को काटा गया, भूमि को समतल किया गया और फिर कृषि का कार्य प्रारम्भ हुआ ।[ix]ऋग्वेद और अथर्ववेद से ज्ञात होता है कि राजा वेन का पुत्र राजापृथुकृषिविद्या का प्रथम अविष्कारक है। उसने ही सर्वप्रथम कृषि विद्या के द्वारा विविध प्रकार के अन्नों के उत्पादन का रहस्य ज्ञात किया । ऋग्वेद में वेन के पुत्र पृथी राजा (पृथी वैन्य) का केवल उल्लेख मात्र है।

पृथी यद्वां वैन्यः सादनेष्वेवेदतो अश्विना चेतयेथाम्।[x]

अथर्ववेद में स्पष्ट रूप से पृथी वैन्य को कृषिविद्या का आविष्कारक माना गया है। अथर्ववेद का कथन है कि वैवस्वत मनु की परम्परा में वेन का पुत्र पृथी राजा हुआ, उसने कृषि की और अन्न उत्पन्न किए।

तस्यामनुर्वैवस्वतोवत्सआसीत्पृथिवीपात्रम्।
तांपृथीवैन्यो 'धोक्तांकृषिंचसस्यंचाधोक्।[xi]

कृषि और अन्न पर सभी मनुष्यों का जीवन निर्भर है। इसलिए कृषिविद्या की शरण में सभी लोग जाते हैं।[xii]सर्वप्रथम कृषिकर्ता इन्द्र और मरुत् को माना जाता है । अथर्ववेद का कथन है कि सरस्वतीनदी के किनारे की उपजाऊ भूमि में माधुर्ययुक्त जौ की खेती हुई। इसमें इन्द्र कृषिकर्म के अधिष्ठाता थे और मरुत् देवों ने किसान का काम किया।

देवा इमं मधुना संयुतं यवं सरस्वत्यामधि मणावचर्कृषुः ।
इन्द्र आसीत्सीरपतिः शतक्रतुः कीनाशा आसन् मरुतः सुदानवः ॥[xiii]

इस मंत्र से यह ज्ञात होता है कि कृषिकर्म के लिए सर्वप्रथम सरस्वती नदी के किनारे की भूमि चुनी गई। यह भूमि अत्यन्त उपजाऊ थी। कृषिकर्म का नियन्ता राजा था और उसकी निगरानी में प्रजाजनों (मरुत्)ने जौ(जव) की खेती की। इससे प्रतीत होता है कि सबसे पहले 'जव' ही बोया गया।

- **अथर्ववेद के अनुसार उत्तम कृषिके लिए आवश्यक तत्त्व** :- उत्तम कृषि के लिए उत्तम भूमि, उत्तम बीज, हल, बैल और किसान की आवश्यकता होती है। अथर्ववेद के तीसरे कांड के १७वे सूक्त के १ से ९ मंत्र का एक कृषिसूक्त कृषिकर्म से सबंधित है । इनमे से अधिकांश मंत्र का सम्बंध ऋग्वेद और यजुर्वेद के साथ है ।

सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक् ।
धीरा देवेषु सुम्नयौ ॥ अ.३.१७.१

अर्थात्, कवि (दूरदर्शी), धीर पुरुष (कृषि के लिए) देवों की प्रसन्नता के लिए हलों को जोतते (नियोजित करते) हैं तथा युगों (जुओं या जोड़ों) को विशेष रूप से विस्तारित करते हैं । अर्थात, स्थूल कृषि में हल से भूमि की कठोरता को तोड़ते हैं, सूक्ष्म कृषि में मन की कठोरता का उपचार करते हैं। मन से जुड़े पूर्वाग्रहों को अलग-अलग करते हैं।

युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम् ।
विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत् सृण्यः पक्वमा यवन् ॥ अ.३.१७.२

हे किसानो ! हलों को प्रयुक्त करो, युगों को फैलाओ । इस प्रकार तैयार उत्पादक क्षेत्र में बीजों का वपन करो । हमारे लिए भरपूर उपज हो । वे परिपक्व होकर काटने वाले उपकरणों के माध्यम से हमारे निकट आएँ । अर्थात, जैसे कृषि की उपज पकने पर ही प्रयुक्त करने योग्य होती है, उसी प्रकार साधनाएँ भी परिपक्व होने पर ही प्रयुक्त की जाने योग्य होती हैं।

लाङ्गलं पवीरवत् सुशीमं सोमसत्सरु ।
उदिद् वपतु गामवि प्रस्थावद् रथवाहनं पीबरीं च प्रफर्व्यम् ॥ अ.३.१७.३

श्रेष्ठफाल से युक्त (अथवा वज्र की तरह कठोर), सुगमता से चलने वाला, सोम (अन्न या दिव्य सोम) की प्रक्रिया को गुप्त रीति से सम्पादित करने वाला हल (हमें) पुष्ट **'गौ'** (गाय, भूमि या इन्द्रियाँ), **'अवि'** (भेड़ या रक्षण सामर्थ्य), शीघ्र चलने वाले रथवाहन तथा नारी (अथवा चेतन शक्ति) प्रदान करे।

इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम्॥ अ.३.१७.४

इन्द्रदेव कृषि योग्य भूमि को सँभालें। पूषादेव उसकी देख-भाल करें, तब वह (धरित्री) श्रेष्ठ धान्य तथा जल से परिपूर्ण होकर हमारे लिए धान्य आदि का दोहन करे।

शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान्।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै॥ अ.३.१७.५

हल के नीचे लगी हुई, लोहे से विनिर्मित श्रेष्ठ 'फालें 'खेत को भली-प्रकार से जोतें और किसान लोग बैलों के पीछे-पीछे आराम से जाएँ। हे वायु और सूर्य देवो! आप दोनों हविष्य से प्रसन्न होकर, पृथ्वी को जल से सींचकर इन ओषधियों को श्रेष्ठ फलों से युक्त करें।

शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय ।। अ.३.१७.६

कृषक हर्षित होकर खेत को जोतें, बैल उन्हें सुख प्रदान करें और हल सुखपूर्वक कृषि कार्य सम्पन्न करें। रस्सियाँ सुखपूर्वक बाँधें। हे शुनः देवता! आप चाबुक को सुख के लिए ही चलाएँ।

शुनासीरेह स्म मे जुषेथाम्।
यद् दिवि चक्रथुः पयस्तेनेमामुप सिञ्चतम्॥ अ.३.१७.७

हे वायु और सूर्यदेव! आप हमारी हवि का सेवन करें। आकाश में निवास करने वाले जल देवता वर्षा के द्वारा इस भूमि को सिंचित करें।

सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव।
यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः॥ अ.३.१७.८

हे सीते (जुती हुई भूमि)! हम आपको प्रणाम करते हैं। हे ऐश्वर्यशालिनी भूमि! आप हमारे लिए श्रेष्ठ मन वाली तथा श्रेष्ठ फल प्रदान करने वाली होकर हमारे अनुकूल रहें।

घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
सा नः सीते पयसाभ्याववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत् पिन्वमाना॥ अ.३.१७.९

घृत (जल) और शहद द्वारा भली प्रकार अभिषिंचित हे सीते (जुती भूमि)! आप देवगणों तथा मरुतों द्वारा स्वीकृत होकर घृत से सिंचित होकर (घृतयुक्त) पोषक रस (जल- दुग्धादि) के साथ हमारी ओर उन्मुख हों।

- **इन कृषि-सम्बन्धी मंत्रों से निम्न्लिखित तथ्य जानने को मिलते है।**
  - बीज बोने से पहले खेत को ठीक ढंग से तैयार किया जाए।
  - कृषि हेतु कृषक, हल और बैलों की आवश्यकता होती है।
  - खाद के रूप में घी, दूध और शहद का भी उपयोग किया जाए।
  - खेती तैयार होने पर हँसिया से काटा जाय। उसे खलिहान में साफ करके घरों में ले जाया जाय।
  - कृषि उत्तम कार्य है। विद्वान् और राजा भी कृषिकार्य करते थे।
  - कृषि से उत्पन्न अन्न सभी मनुष्यों और पशु-पक्षियों को पुष्ट करता है।
  - हल की फाल बहुत अच्छी होनी चाहिए। यह कठोर और तीक्ष्ण हो।
  - बैलों को जूओं में ठीक ढंग से रस्सी से बाँधा जाए, रस्सी मजबूत हो।
  - ठीक ढंग से जुते हुए खेत में ही उत्तम कोटि का बीज बोया जाय।

- समयानुकूल वर्षा के लिए यज्ञ किया जाय।
- जलवायु की अनुकूलता हो। समय पर वर्षा हो, जिससे उत्तम खेती हो सके।
- पृथिवी अन्नदात्री है, अतः उसका माता के तुल्य आदर करें।

❖ **वेद अनुसार भूमि के प्रकार :-** कृषि के योग्य उपजाऊ भूमि के लिए उर्वरा शब्द प्रयोग किया जाता है। ऐसीभूमि को हल से जोता जाता है और उसमें उत्तम बीज बोया जाता है।[xiv] उर्वरा भूमि में उत्पन्न होने वाले अन्न को 'उर्वर्य' कहते हैं।[xv] जिस भूमि में अन्न नहीं बोते हैं, उसे खल कहते हैं। यह बिना जुती हुई भूमि खलिहान का काम करती है। इसमें कृषि से उत्पन्न अन्न को साफ किया जाता है और भूसी आदि हटाकर भंडारण के योग्य बनाया जाता है।[xvi] खलिहान में रखे हुए अन्न के लिए 'खल्य' शब्द का प्रयोग यजुर्वेद मे किया गया है।[xvii] खलिहान में नमी आदि के कारण कुछ कीड़े भी अन्न में लग जाते हैं, इन्हें 'खलज' कहा गया है और इनको मारने का विधान है।[xviii] जो भूमि कृषि के योग्य नहीं है, उसे ऊषर या इरिण (ऊसर) कहते हैं।[xix] इसमें क्षारमृत्तिका (खारी मिट्टी) होती है।

❖ **यज्ञ और कृषि का सबंध :-** वेदों में कृषि के लिए यज्ञ को बहुत महत्त्व दिया गयाहै। यज्ञ को विष्णु (परमात्मा) का रूप माना गया है। उसे संसार का केन्द्र या नाभि कहा गया है। इसमें वसन्त ऋतु घी का कार्य कर रहा है, ग्रीष्म ऋतु समिधा का और शरद् ऋतु सामग्री (हवि) का।[xx] यजुर्वेद के अढाहरवें अध्याय में 'यज्ञेन कल्पन्ताम्' कहते हुए १ से २७ मंत्र तक यज्ञ से होने वाले लाभों का विस्तृत वर्णन है। इसमें कृषि से सम्बंध ये तथ्य दिए गए हैं

(१) यज्ञ से अन्न और फल-फूल की वृध्धिकरना।[xxi]

(२) बीज का अंकुरित होना और फल धारण करना। हल से धन-धान्य की उत्पत्ति और अच्छी फसल के बाधक तत्त्वों का विनाश।[xxii]

(३) उत्तम कृषि और वृष्टि का होना।[xxiii]

(४) अक्षय अन्न और धान्य आदि की प्राप्ति।[xxiv]

(५) यज्ञ से जल और अग्नि की प्राप्ति। उससे वृक्ष-वनस्पतियों की वृध्धि। दो प्रकार की उपज (१) कृष्टपच्य:- कृषि के द्वारा उत्पन्न धान्य आदि को कृष्टपच्य कहते है। (२) अकृष्टपच्य :- बिना कृषि के ही उत्पन्न होने वाले जंगली चावल (नीवार) आदि, इन्हें अकृष्टपच्य कहते हैं।[xxv]

(६) यज्ञ के द्वारा इन्द्र (वर्षा) और मरुत् (वायु) का होना। कृषि के लिएजिस प्रकार वर्षा की आवश्यकता है,उसी प्रकार वायु की आवश्यकता है।[xxvi]

(७) यज्ञ के द्वारा अग्नि की ऊष्मा, सूर्य की ऊष्मा, सूर्य की किरणों का प्रकाश और उत्तम भूमि का प्राप्त होना। कृषि के लिए उत्तम भूमि, पृथिवी की आन्तरिक अग्नि या ऊष्मा और सूर्य का प्रकाश आवश्यक है।[xxvii] इनका मंत्र में संकेत है।

❖ **कृषि के लिए आवश्यक पदार्थ :-** वेद अनुसार कृषि के लिए निम्नलिखित पदार्थों की आवश्यकता होती है।

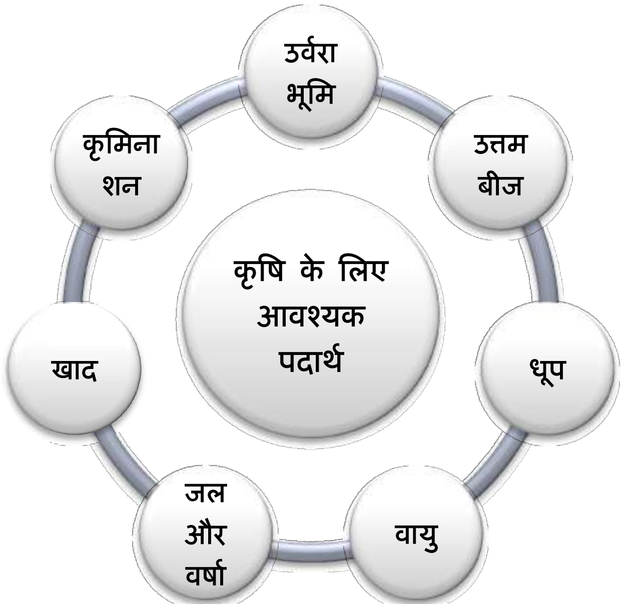

वेदों में इनके लिए स्फुट निर्देश प्राप्त होते हैं।

१. **उर्वरा भूमि :** कृषि के लिए सबसे पहले आवश्यकता 'उर्वरा भूमि' की है। उर्वरा भूमि में बोया गया बीज ठीक ढंग से निकलेगा और बढ़ेगा। अथर्ववेद के अनुसार'उर्वरा भूमि' में बोया गया बीज ठीक ढंग से निकलता है।[xxviii]इसलिए'उर्वरा भूमि' को नमस्कार किया गया है।

२. **उत्तम बीज:**ऋग्वेद के अनुसार किसान 'शुध्ध भूमि' में बीज बोते हैं।[xxix]भूमि के पश्चात् बीज का महत्त्व है। बीज उत्तम होगा तो कृषि भी अच्छी होगी। अतएव यजुर्वेद में कहा गया है कि भूमि को ठीक ढंग से परिष्कृत करके बीज बोना चाहिए।[xxx]

३. **वायु :** कृषि के लिए वायु की भी अत्यन्त आवश्यकता है। वायु, विशेष रूप से कार्बन डाइयाक्साइड (CO_2) की आवश्यकता होती है। वायु (CO_2),सूर्य की किरणे, जल और वृक्ष का हरिततत्त्व इन चारों के संश्लेषण से प्रकाश संश्लेषण क्रिया होती है। इससे सभी वृक्ष-वनस्पतियों को एक ओर ग्लुकोस मिलता है और दूसरी ओर Oxygen (ओक्सीजन, प्राणवायु) मिलती है। यजुर्वेद में कृषि हेतु आवश्यक जल और वायु का एक साथ उल्लेख है। इस मंत्र में समुद्र और वायु तथा जल और वायु का उल्लेख है। इस मंत्र में ६ (छह) बार 'वाताय' (वायु) का उल्लेख है।[xxxi] यजुर्वेद में कृषि के लिए उपयोगी वर्षा (इन्द्र) और मरुत् (वायु) का एक साथ उल्लेख है।[xxxii] अन्य जगह एक मंत्र में सभी प्रकार की वायुओं (मरुत्) के सहयोग की प्रार्थना की गई है।[xxxiii]जिसमें प्राणवायु (Oxygen) के साथ अपान वायु (CO_2) का भी संकेत है। अथर्ववेद के मंत्र में स्पष्ट रूप से अवितत्त्व (रक्षकतत्त्व, Chlorophyll) का उल्लेख है और जिसके विषय में कहा गया है कि इसके(वायु) कारण ही वृक्षों और वनस्पतियों में हरियाली है।[xxxiv]

४. **जल और वर्षा :** कृषि के लिए योग्य समयसर वर्षा(बारीश) का होना अतिआवश्यक है। साथ ही सिंचाई के लिए अन्य साधन जैसे कुआँ, तालाब आदि से जल की सुविधा आवश्यक है। यजुर्वेद में राष्ट्रीय प्रार्थना 'आब्रह्मन्' में योग्य समयसर वर्षा की प्रार्थना की गई है।[xxxv] अथर्ववेद में भूमि को 'पर्जन्यपत्नी' और 'वर्षमेदस्' कहा गया है।[xxxvi]जिसका अभिप्राय यह है कि 'मेघ' और 'वृष्टि' पृथ्वी के पालक है। वर्षा से पृथ्वी को जीवनी शक्ति मिलती है। भूमि कृषि के योग्य हो जाती है। और 'वर्षमेदस्' का अभिप्राय है कि वर्षा से पृथ्वी की शक्ति बढ़ती है और वह अनुप्राणित होती है। यजुर्वेद में कृषि के साथ ही वृष्टि का उल्लेख किया गया है।[xxxvii] इसका अर्थ यह है कि 'कृषि' और

'वृष्टि' परस्पर सापेक्ष है। वर्षा के बिना कृषि सफल नहीं हो सकती है। यजुर्वेद मेंउत्तम कृषि और उपज के लिए जल और ओषधियों के उपयोग का निर्देश प्राप्त हौता है।[xxxviii]

५. **खाद :** वेदों में कृषि को उपजाऊ बनाने के लिए 'खाद' के उपयोग का उल्लेख है। खाद के लिए करीष, शकन् और शकृत् (गोबर) जेसे शब्दों का प्रयोग किया गया है।[xxxix] यह खाद प्रायः गाय या बैल के गोबर की खाद होती थी। अथर्ववेद में 'खाद' को फलवती कहा गया है।[xl] इससे स्पष्ट है कि खाद की उपयोगिता को ठीक समझा गया था । अति उत्तम खेती के लिए घी, दूध, शहद और ओषधियों के रस के मिश्रण से बनी खाद डालने को कहा गया है।[xli] घी, दूध और शहद आदि के मिश्रण से बनी खाद डालने से कृषि उत्तमहोती है वैसे कुछ उदाहरण श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने अपने अथर्ववेद भाष्य में प्रस्तुत किए हैं।

६. **धूप :** कृषि के लिए 'धूप' अनिवार्य है। यदि वृक्ष, पौधो को घूप नहीं मिलेगीतो वे बढ नहीं पाएगे । सूर्य कि किरणे पडने से ही पेड़ों में ऊर्जा आती है और उन्हें ग्लुकोस के रूप में भोजन मिलता है। यजुर्वेद मे कहा गया है कि सूर्य की किरणें बीजों की उत्पत्ति और उनकी वृध्धि में कारण हैं।[xlii] इसी भाव को अन्य मंत्र में स्पष्ट किया है कि सभी अग्नियों का सहयोग कृषि को प्राप्त हो।[xliii] अर्थात् एक ओर सूर्य की किरणों से ऊर्जा प्राप्त हो, दूसरी ओर भूमि के अन्दर विद्यमान ऊष्मा (ताप) का सहयोग मिले । सूर्य की किरणें न केवल ऊर्जा देती है, परंतु कृषि के लिए अनिवार्य वृष्टि का भी कारण है।[xliv]

७. **कृमिनाशन एवं सुरक्षा :** उत्तम भूमि और अच्छे बीज आदि के होने पर भी यदि खेत की सुरक्षा नहीं की जाएगी तो कृषि में उत्पादन ठीक नहीं हो सकेगा, इसलिए सुरक्षा अतिआवश्यक है। सुरक्षा से ही उत्तम कृषि हो सकेगी। यजुर्वेद में कहा गया है कि हमारी कृषि उत्तम फल से युक्त हो । यजुवेंद अनुसार'**सूश्च मे प्रसूश्च मे सीरं च मे लयश्च मे ।**'[xlv] में चार शब्दों से कृषि की प्रक्रिया को बतायागया है । १.सू२.प्रसू३.सीर४.लय ।

- **'सू'** का अर्थ है उत्पादन की क्षमता वाला अर्थात् उत्तम बीज ।
- **'प्रसू'**का अर्थ है- प्रसव, उत्पादन और फलयुक्त धान्य अर्थात् उत्तम उत्पादन ।
- **'सीर'** का अर्थ है - हल अर्थात् हल के प्रयोग से उत्पन्न धान्य।
- **'लय'** का अर्थ है कृषि-नाशक तत्त्वों को नष्ट करना ।

इस प्रकार कृषि के लिए आवश्यक हैं उत्तम बीज, उत्तम उत्पाद, सफल कृषि और कृमि-कीट आदि का नाशन ।

- **उपसंहार** :- वर्तमान समय मेंकृषि मे रासायणिक खादों के अधिकतर प्रयोग करके वर्ष में अनेक फसल उपजाकर भूमि की उर्वराशक्ति को क्षीण करना, कीटनाशक दवाओं का अनुचित प्रयोग करना, भूमि पर औद्योगिक कचरे, कूड़ा कर्कट का अनुचित रीति से विसर्जन करना, अनुचित रीति से वृक्षों और वनों को काटना भी वस्तुतः पृथ्वी की हिंसा है। जिसका निषेध वैदिक खेती में किया गया है।कृषि वैज्ञानिक मानते हैं कि खेतों में हरी खाद और गोबर की कम्पोसट खाद का प्रयोग कर इन पोषक तत्त्वों को पूरा किया जाता था लेकिन अब ऐसा नहीं हो पा रहा है।

आजकल के रासायणिक खाद से धन-धान्य अधिकमात्रा में पैदा होता है परन्तु निःसत्व होने के कारण मनुष्य के शरीर के लिए हानिकारक है। जिसके कारण कैंसर, हृदयरोग जेसे अनेक भयानक रोग पैदा हो रहे हैं। जहां वैदिक खेती में खेती से उत्पन्नधन-धान्य मनुष्य के स्वास्थ्यके लिए निरोगी होता था । वहीं वर्तमान समय में खेती के बदलते स्वरूप से उत्पन्नधान्य से मनुष्य का स्वास्थ्य क्षीण हो रहा है।

समय के साथ किसान भी परंपरागत खेती से दूर होते गए है और वैदिक ज्ञान को भूलते गए। इसका असर मिट्टी की सेहत के साथ भूमिजल स्तर और पर्यावरण की गुणवत्ता, मानव स्वास्थ्य पर भी पडऩे लगा।आज के समय मे आवश्यकता है कि हम वैदिक खेती के सिध्धांतो और उनके उदेश्यों के अनुसार खेती(कृषिकर्म) करें ताकि खेती टिकाऊ हो, धरती माता, जल, वायु, पर्यावरण प्रदूषित ना हो, किसानों को भी आर्थिक फायदा पहुंचाने वाली व उत्पादित धन-धान्य से मानवमात्र के स्वास्थ्य लाभ हो।इस शोध का संदेश वही है कि वेदों में सिर्फ पूजा पाठ ही नहीं है, बल्कि वेद को पढ़कर और उसे समजकर स्वस्थ भारत के अतीत और कृषिविज्ञान को समजना है।

❖ पादटिप्पणी :-

- [i]इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाभि रक्षतु, सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम्।अथर्ववेद ३.१७.४
- [ii]सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्, धीरा देवेषु सुम्नयौ । अथर्ववेद ३.१७.१
- [iii]सोदक्रामत्सा मनुष्यान् आगच्छत्तां मनुष्या उपाह्वयन्तेरावत्येहीति, तस्या मनुर्वैवस्वतो वत्स आसीत्पृथिवी पात्रम्, तां पृथी वैन्योऽधोक्तां कृषिं च सस्यं चाधोक्, ते स्वधां कृषिं च सस्यं च मनुष्या उप जीवन्ति कृष्टराधिरुपजीवनीयो भवति य एवं वेद । अथर्ववेद ३.१०.२४
- [iv]यद्यामं चक्रुर्निखनन्तो अग्रे कार्षीवणा अन्नविदो न विद्यया ।
- वैवस्वते राजनि तज्जुहोम्यथ यज्ञियं मधुमदस्तु नोऽन्नम् ॥ अथर्ववेद ६.११६.१
- [v]अथर्ववेद- १२.०१.२२
- [vi]यन्तासियमनोध्रुवोऽसिधरुणःकृष्यैत्वाक्षेमायत्वारय्यैत्वापोषायत्वा॥ यजुर्वेद ९.२२
- [vii]यामेषामेतामनुशृण्वन्तिकृषन्तोहस्मैवपूर्वेवपन्तोयन्तिलुनन्तोऽपरेमृणन्तःशश्वद्धैभ्योऽकृष्टपच्याएवौषधयःपेचिरे। शतपथ ब्राह्मण १.६.१.३
- [viii]अथर्ववेद. २०.७६.४
- [ix]देवास आयन्परशूँरबिभ्रन्वना वृश्चन्तो अभि विड्भिरायन् ।
- नि सुद्र्वं दधतो वक्षणासु यत्रा कृपीटमनु तद्दहन्ति ॥ ऋग्वेद १०.२८.८
- [x]ऋग्वेद ८.९.१०
- [xi]अथर्ववेद ८.१०.१०-११
- [xii]ते स्वधां कृषिं च सस्यं च मनुष्या उप जीवन्ति कृष्टराधिर् उपजीवनीयो भवति य एवं वेद । अथर्ववेद ८.१०.१२
- [xiii]अथर्ववेद ६.३०.१
- [xiv]यथा बीजमुर्वरायां कृष्टे फालेन रोहति । अ.१०.६.३३
- [xv]नम उर्वर्याय । यजुर्वेद-१६.३३
- [xvi]खले न पर्षान् । ऋग्वेद-१०.४८.७
- [xvii]खल्याय च । यजुर्वेद.१६.३३
- [xviii]खलजाः.....तान् नाशय । अथर्ववेद-८.६.१५

- [xix]असौ च या न उर्वरा । ऋग्वेद-८.९१.६
- उषरं क्षेत्रम् (सायण) । इरिणानु । अथर्ववेद-४.१५.१२
- [xx]वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद् हविः । यजु० ३१.१४
- [xxi]वाजश्च मे प्रसवश्च मे । यजु० १८.१
- [xxii]सूश्च मे प्रसूद्ध में सीरं च मे लयक्ष में। यजु० १८.७
- [xxiii]कृषिश्च मे वृष्टिश्च मे । यजु० १८.९
- [xxiv]अक्षितं च मेऽनं च मे। यजु० १८.१०
- [xxv]अग्निश्च म आपश्च मे वीरुधन म ओषधयश्च मे कृष्टपच्याश्च मे अकृष्टपच्याश्च मे । यजु० १८.१४
- [xxvi]इन्द्रश्च मे मरुतश्च मे । यजु० १८.१७
- [xxvii]अग्निश्च मे घर्मश्च मेऽर्कश्च मे सूर्यश्च मे, पृथिवी च मे । यजु० १८.२२
- [xxviii]यथाबीजमुर्वरायांकृष्टेफालेनरोहति।
  एवामयिप्रजापशवोऽन्नमन्नंविरोहतु ॥ अथर्ववेद-१०.६.३३
- [xxix]वपन्तोबीजमिवधान्याकृतः।ऋग्०१०.९४.१३
- [xxx]कृतेयोनीवपतेहबीजम्।यजु०१२.६८
- [xxxi]समुद्रायत्वावातायस्वाहा।सरिरायत्वावातायस्वाहा।यजु०३८.७
- [xxxii]इन्द्रश्चमेमरुतश्चमे।यजु०१८.१७
- [xxxiii]विश्वेअद्यमरुतोविश्वऊती।यजु०१८.३१
- [xxxiv]अविर्वेनामदेवताऋतेनास्तेपरीवृता।तस्यारूपेणेमेवृक्षाहरिताहरितस्रजः॥अ०१०.८.३१
- [xxxv]निकामेनिकामेनःपर्जन्योवर्षतु।यजु०२२.२२
- [xxxvi]भूम्यैपर्जन्यपत्यैनमोऽस्तुवर्षमेदसे।अ०१२.१.४२
- [xxxvii]कृषिश्चमेवृष्टिश्चमे।यजु०१८.९
- [xxxviii]संमासृजामिपयसापृथिव्याः, सेमासृजामिअद्भिरोषधीभिः।यजु०१८.३५
- [xxxix]गोष्ठेकरीषिणीःअथर्ववेद-३.१४.३, शकमयंधूमम् । ऋग्वेद-०१.१६४.४३,शकधूम, अ०६.१२८.३,
- शकृत्ऋग्०१.१६१.१०
- [xl]करीषिणीफलवतींस्वधाम्०, अथर्व०१९.३१.३
- [xli]घृतेनसीतामधुनासमज्यताम्।...... पयसापिन्वमाना।यजु०१२.७०
- संवपामिसमापओषधीभिःसमोषधयोरसेन।यजु०१.२१
- [xlii]तस्यांनोदेवःसविताधर्मसाविषत्।यजु०१८.३०
- [xliii]विश्वेभवन्त्वग्नयःसमिद्धाः।यजु०१८.३१
- [xliv]सूर्यस्यरश्मयेवृष्टिवनये।यजु०३८.६
- [xlv]यजुर्वेद-१८.७